ISSN No. : 2394-0344 Remarking : Vol-1 * Issue-11*April-2015

21वीं सदी में जनजातीय विकास

रश्मि नागवंशी
विभागाध्यक्षा,
अंग्रेजी विभाग,
शासकीय महाविद्यालय,
जुन्नारदेव, मध्यप्रदेश

सारांश

21वीं सदी में जनजातीय विकास के अध्ययन का उद्देश्य है कि आदिवासी को अपनी प्रवृत्ति और प्रतिभा के आधार पर विकसित होने का मौका दिया जाना चाहिये वे अपनी विरासत को बनाए रखने और आगे बढ़ने के लिए स्वतंत्र हो। उनकी विशिष्टता को हानि पहुँचाए बगैर उन्हें राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में शामिल किया जाए। परम्परावादी आदिवासी समाज की विशिष्ट प्रतिभा की पहचान करके उन्हें विकास का समुचित अवसर दिया जाए। आदिवासी संस्कृति, सभ्यता और जीवन शैली की उपेक्षा न हो और उन्हें अपनी संस्कृति और सभ्यता के अनुरूप विकास की मुख्य धारा में शामिल होने दिया जाये। सिर्फ आर्थिक प्रतिस्पर्धा आधुनिकता का पैमाना न बने उसमें मानवीय मूल्यों का समावेश हो। ग्रामीण जनजीवन एवं उनके आर्थिक संसाधनों पर आधारित विकास की नीतियां बने, जिसमें निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी सुनिश्चित हो।

मुख्य शब्द : विकास योजना, मानवीय मूल्य

प्रस्तावना

A tribe is a social group with territorial affiliation, endogamous, with no specialization of functions, ruled by tribal officers, hereditary or otherwise, united in language or dilect, recognizing social distance from other tribes or castes but without any stigma attached in the case of a caste structure, following tribal traditions, beliefs and customs, illiberal of naturalization of ideas from alien sources; above all conscious of a homogeniety of ethnic and territorial intergratin.[1]

आदिम काल के मानव ने जब पहली कुल्हाड़ी आर धनुष बनाया था तो वह अर्थशास्त्र नही था, वह केवल हम कह सकते है टेक्नालॉजी थी। आदिवासी अपने हित को पूरा कर अक्सर समाज के हित को उससे अधिक कारगर ढंग से साधता है। "The world 'tribe' as generally under stood in the literature on Anthropology is a social group speaking a distinctive language or dialect and possessing a distinctive culture that makes it off from the other tribes" [2]

विकास शब्द के दो अर्थ है पहला– टेक ऑफ की स्थिति जहाँ से अर्थव्यवस्था स्वतः ही आगे बढ़ती रहती है और दूसरा– इस स्थिति तक पहुचने की प्रक्रिया। अतः 'टेक ऑफ' की स्थिति आने पर विकसित और उससे पहले विकासशील अवस्था कही जाती है। विकास समस्त समाज तथा सामाजिक प्रणाली के दीर्घजीवी उन्नयन की वह दशा है जिसमें पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकी संतुलन के साथ हर संभव बेहतर जिंदगी जी सके। इस प्रकार विकास भौतिक सत्यता के साथ मानसिक अवदशा भी है। जिसमें समाज आर्थिक, सामाजिक संस्थागत, प्राद्योगिकी, अभिरूचि एवं पर्यावरणीय संतुलन के विभिन्न संयोगो के साथ–साथ ऐसे साधनों को प्राप्त कर चुका हो कि वह बेहतर मानवीय जिंदगी जी सके। बेहतर मानवीय जिंदगी के लिए कम से कम तीन बाते जरूरी है –

प्रथम– जीवन को बनाए रखने वाली वस्तुए जैसे आवास, भोजन, चिकित्सा और सुरक्षा।

द्वितीय– आय में वृद्धि के अलावा जीवन रोजगार और बेहतर षिक्षा की व्यवस्था हो।

तृतीय– सामाजिक एवं आर्थिक परिधि में व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय स्तर पर परिश्रता से मुक्ति मिल सके।

''अनुसूचित जनजातियों से संबंधित संविधान मे ंदो प्रावधान प्रमुख है पहला सुरक्षा संबंधी दूसरा विकासात्मक''[3] संविधान में रखे गये जनजातीय संवैधानिक प्रावधानों का मुख्य उद्देश्य है असभ्य, पिछड़ी एवं आशिक्षित जनजातियों के जीवन स्तर को इस सीमा तक सुधारना, जिससे वे सभ्य समाज के सदस्यों की तरह जीवन यापन कर सके।

आदिवासी को अपनी प्रवृत्ति और प्रतिभा के आधार पर विकसित होने का मौका दिया जाना चाहिये वे अपनी विरासत को बनाए रखने और आगे

बढ़ने के लिए स्वतंत्र हो। उनकी विशिष्टता को हानी पहुँचाए बगैर उन्हें राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में शामिल किया जाए। इस बात को ध्यान में रखकर आदिवासी विकास कार्यक्रमों की शुरूआत प्रथम पंचवर्षीय योजना से हुई।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान बहुमुखी जनजातीय विकासखंड की अवधारणा लागू की गई। तृतीय पंचवर्षीय योजना में इसका नाम बदलकर जनजातीय विकासखंड कर दिया चतुर्थ में लेकर अब तक जारी है। ''आर्थिक दृष्टिकोण से इस पर क्रमशः कुल योजना व्यय का 1.04 प्रतिशत, 0.96 प्रतिशत, 0.75 प्रतिशत तथा 0.5 प्रतिशत खर्च हुआ।''[4] यह उत्तरोत्तर आठवी और नवी पंचवर्षीय योजना तक घटता चला गया। इस प्रकार आदिवासी विकास मद की प्रतिशत भागीदारी क्रमिक रूप से घटती चली गई। एक लंबी विकास प्रक्रिया के बाद भी आदिवासियों को कुछ नही मिला। यह एक कटु सत्य है कि सामाजिक न्याय की नैतिकता यदि नही होगी, तो समानता भी नही आ सकती और यदि जीवन दर्शन नही हो तो भ्रष्टाचार समाप्त नही हो सकता अतः ऐसी परिस्थिति में कुछ लोगो की नैतिकता आर्थिक प्रतिस्पर्धा शोषण और अत्याचार है तो इससे प्रभावित लोगो की नैतिकता से संघर्ष अवश्य होगा, फिर भी हमारी आकांक्षा या आदिवासी जन आकांक्षा यह होगी कि कम असमान धाराओ में संतुलन की तलाश की जाए और विकास बनाम विनाश की संभावना को समाप्त करने की सही दिशा खोजी जाए।

''आदिवासी समाज की न्यूनतम आर्थिक आवश्यकताएं विकसित समाज के लिए चुनौती है।''[4] एक ऐसी चुनौती जो ''उपभोक्ता संस्कृति अथवा मीडिया संस्कृति'' से कोसो दूर प्रकृति की गोद में अमन–चैन की जिंदगी व्यतीत कर रहा है। परंतु हमें उसका विकास करना है उसे राष्ट्र की धारा से जोड़ना है।

आदिवासियों के सामाजिक जीवन में बदलाव आया है और यह निम्नलिखित कारणों से संभव हुआ है – कर्जा निवारण तथा जमीन सुधार संबंधी कानून, आदिवासियों के विकास के लिए तैयार की गई खास योजनाएँ, जंगल मजदूर सहकारी संस्था, सर्वोदय योजना, आदिवासी विकास गुट, क्षेत्र विकास योजना, एकाधिकार धान क्रय, आर्थिक तथा शैक्षिक नियोजन, परिवार नियोजन, सार्वजनिक स्वास्थय सुधार, जलपूर्ति, सहकारी कृषि आपूर्ति, पंचायती राज, शैक्षिक साधन एवं सुविधा यात्रा तथा यातायात के साधनों में हुई वृद्धि नए सिरे से प्रारंभ किए उद्योग व व्यवसाय, आसपास के प्रदेषों का तीव्रता से होने वाला नगरीयकरण, राजकीय पक्षो तथा सामाजिक कार्यकर्ता का नित्य बढ़ता संचार आदि से भी आदिवासियों का पारम्परिक जीवन बदलता जा रहा है। प्रमुखतः अन्न तथा वेशभूषा के संबंध में उनकी आदते, रूढ़िया, नीति मूल्य, प्रतिष्ठा मूल्य, आपसी झगड़े मिटाने तथा दोषी व्यक्तियों को सजा देने की पद्धति स्त्री–पुरूष विवाह– संबंध, स्वास्थ्य विषयक आदत, शहरी समाज तथा बाहरी जगत से संबधित उनकी कल्पनाएं आदि में निश्चित रूप से यह बदलाव आया है।

नीति मूल्य बदलते जा रहे है। प्रमाणिकता का लोप हो रहा है। ऐसे सुखो की अभिलाषा, जैसे अधिक पैसा कमाने की नई–नई चीजे खरीदने की नए–नए आनंद प्राप्त करने की लालसा लोगो में बढ़ रही है।

आदिवासियों के प्रति सरकार तथा तथाकथित मुख्यधारा के समाज के लोगो का नजरिया कभी संतोषजनक नही रहा। आदिवासियों को सरकार द्वारा पुर्नवसित करने का प्रयास भी पूर्ण रूप से सार्थक नही हो सका। उन्नतः अपनी ही जमीनों व संसाधनों से विलग हुए आदिवासियों का जीवन मरणासन्न अवस्था में पहुँच गया।

21वीं सदी में पहुँचकर भी हमारे देश का आदिवासी समाज जहाँ विकास की बाट जोह रहा है वही दूसरी तरफ सरकार की उदसीन नीतियों के कारण उनकी स्थिति ज्यों की त्यों ही है। विकास के नाम पर ठगे जा रहे आदिवासियों के पलायन और विस्थापन आदि समस्याओं पर समाज और सरकार के सामने आदिवासियों क सार्थक विकास पर प्रश्न चिन्ह खड़ा है।

आश्चर्य की बात है समाज ने, सरकार ने और राजनीतिज्ञों ने ''आदिवासियों के विकास'' के नाम पर जो अरबा रूपये का अपव्यय किया, फिर भी हमारी नजरों में वे गरीब, असहाय, जंगली और असभ्य है परंतु सभ्यता क्या है इसे शब्दों में व्यक्त करना कठिन है। सभ्यता को पुनः परिभाषित करना होगा।

परम्परावादी आदिवासी समाज की विशिष्ट प्रतिभा की पहचान करके उन्हें विकास का समुचित अवसर दिया जाए। आदिवासी संस्कृति, सभ्यता और जीवन शैली की उपेक्षा न हो और उन्हें अपनी संस्कृति और सभ्यता के अनुरूप विकास की मुख्य धारा में शामिल होने दिया जाये। सिर्फ आर्थिक प्रतिस्पर्धा आधुनिकता का पैमाना न बन उसमें मानवीय मूल्यों का समावेश हो। ग्रामीण जनजीवन एवं उनके आर्थिक संसाधनों पर आधारित विकास की नीतियां बने, जिसमें निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी सुनिश्चि हो।

संदर्भ ग्रंथ

1. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार, 28वीं रिपोर्ट, 1986,87 पृष्ठ 65.
2. Hobel "Man Primitive world" Macgraw Hill. New Youk, 1958, P-156.
3. श्रीवास्तव लोकेश, जनजातीय परिदृश्य, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2010 पेज न. 55.
4. गुप्ता रमणिका, आदिवासी विकास से विस्थापन, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली 2008 पेज नं. 46
5. पी. आर. नायडू, भारत की आदिवासी : विकास की समस्याएं राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली 2002, पेज नं. 08.